संस्थापित १८६७ ई.

ओ३म्

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ २,५००
वार्षिक शुल्क ₹ २००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ ५.००

● वर्ष : १२६ ● : अंक ४५ ● ०७ नवम्बर २०२४ (गुरुवार) कार्तिक शुक्लपक्ष षष्ठी सम्वत् २०८१ ● दयानन्दाब्द २०० वेद व मानव सृष्टि सम्वत्: १६६०८५३१२५

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की 200वीं जयन्ती ज्ञान ज्योति पर्व स्मरणोत्सव एवं विराट आर्य महाकुम्भ के प्रचारार्थ मा. पर्यटन मंत्री ठाकुर जयवीर सिंह एवं सभा प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा जी द्वारा ओ३म ध्वज दिखा कर वेद प्रचार रथों को किया गया रवाना

वेदों के विद्वान, प्रसिद्ध समाज सुधारक तथा आर्य समाज के संस्थापक महर्षि देव दयानन्द सरस्वती जी की २००वीं जयन्ती के शुभ अवसर पर आयोजित ज्ञान ज्योति पर्व स्मरणोत्सव एवं विराट आर्य महाकुम्भ समारोह के प्रचार-प्रसार हेतु प्रचार वाहनों को श्री ठाकुर जयवीर सिंह जी, पर्यटन एवं सँस्कृति मंत्री उ.प्र. एवं श्री देवेन्द्रपाल वर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. ने दिनांक ०३ नवम्बर, २०२४ को आर्य गुरुकुल महाविद्यालय, सिरसागंज, फिरोजाबाद से ओ३म् ध्वज दिखा कर रवाना किया।

भारत सरकार एवं संस्कृति विभाग उ.प्र. के सहयोग से महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की २००वीं जयन्ती को भव्यता एवं दिव्यता के साथ मनाने का निर्णय लिया गया है। जिसका शुभारम्भ १२ फरवरी, २०२३ को माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने नई दिल्ली में किया था। उसी क्रम में

आर्य गुरुकुल महाविद्यालय, सिरसागंज, जनपद फिरोजाबाद में दिनांक १६, १७ व १८ नवम्बर, २०२४ को ज्ञान ज्योति पर्व स्मरणोत्सव एवं विराट आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया गया है। इसके प्रचार के लिए वेद प्रचार रथों को उ.प्र. के सभी जिलों में भेजा गया हैं। समारोह के संयोजक आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. व पर्यटन एवं संस्कृति विभाग उ.प्र. हैं।

माननीय पर्यटन मंत्री जी ने बताया कि इस विराट आर्य महासम्मेलन में देश-विदेश के आर्य वैदिक विद्वान, कई राज्यों के राज्यपाल, कुलाधिपति, सन्यासीगण, शामिल होंगे।

आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा जी ने उत्तर प्रदेश के समस्त आर्यों का आवाहन इस स्मरणोत्सव व महासम्मेलन को सफल बनाने के लिए किया। उन्होंने गुरुकुलों, विद्यालयों व समस्त आर्य समाजों को

इस महासम्मेलन में पधारने के लिए लोगों को आमंत्रित किया। सभा मंत्री श्री पंकज जायसवाल जी ने भी सभी आर्यों को बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेने को कहा।

इस अवसर पर सर्व श्री गजेन्द्र सिंह, ज्ञानेन्द्र सिंह, डा. गुरुदत्त सिंह, रवि शास्त्री, आचार्य कुशल देव शास्त्री, विशाल श्रीवास्तव (जिला पर्यटन अधिकारी), आलोक भाटी (प्रधानाचार्य), सत्यकाम तोमर, देव शरण आर्य, महेश गुप्ता, नितिन सिंह, दीपक सिंह, देश दीपक गुप्ता, दिलीप सिंह धर्मपाल त्यागी, रामवीर कौशिक, नवीन शास्त्री, नागेन्द्र सिंह (पप्पू), अंशुल खंडेलवाल सहित सैकड़ों आर्य जन उपस्थित थे। ●●●

वेदामृतम्

परि प्रासिष्यदत् कविः, सिन्धोरूर्मावधि श्रितः।
कारुं बिभ्रत् पुरुस्पृहम्।। साम ४८६

आनन्द का अथाह सिन्धु लहरा रहा है। सच्चिदानन्द-स्वरूप पवमान सोम प्रभु उसकी अनन्त लहरों पर झूल रहे हैं। वे प्रतीक्षा कर रहे हैं कि कोई और भी आकर इस क्रीडा में उनका साथी बने। इधर मैं न जाने कब से उनके पास पहुँचने की आशा संजोये बैठा हूँ। इच्छा होती है कि मैं भी झट दौड़कर उनके समीप पहुँच जाऊँ और उनके साथ लहरों पर झूलने लगूं। पर जब एक ओर सोम प्रभु की महत्ता को और दूसरी ओर अपनी क्षुद्रता को देखता हूँ, तो पैर आगे बढ़ते ही नहीं। मेरी हालत वैसी ही हो रही है, जैसी उस निर्धन घर में जन्मे बालक की होती है, जो राजपुत्रों को गेंद खेलते देखकर स्वयं भी उनके खेल में सम्मिलित होना चाहता है, किन्तु अपनी स्थिति पर ध्यान देकर उनके पास जाने का साहस नहीं जुटा पाता और दूर खड़ा-खड़ा सोचता रहता है कि क्या ही अच्छा होता यदि ये मुझे भी अपने साथ खेलने के लिए बुला लेते ! मैं भी मन में यह ललक लिये बैठा हूँ कि मेरी सब न्यूनताओं के साथ सोम प्रभु मुझे अपना साथी बना लें। पर क्या कभी मेरी यह तृष्णा पूरी हो सकेगी ? क्या कभी मेरे और प्रभु के बीच की दूरी मिट सकेगी? चिरकाल से प्यास-भरी दृष्टि से सोम प्रभु की ओर निहारते हुए मुझे वे मानो कह रहे हैं कि चिन्ताकुल मत हो, हम दोनों का मिलाप असम्भव नहीं है, कुछ तू बढ़, कुछ मैं बढ़ूं। मैं तुझे पकड़ने के लिए किनारे की ओर आता हूँ, तू स्वयं को मुझे समर्पित करके निर्भय होकर समुद्र की लहरों में फेंक दे। डूबेगा या उतरायेगा इसकी चिन्ता तू मत कर।

प्रभु की प्रेरणानुसार मैंने आज स्वयं को प्रभु के हाथों में सौंप दिया है। मैं उनका 'फारु' अर्थात् स्तुति-कर्ता बन गया हूँ, स्तोत्र रच-रचकर उन्हें समर्पित कर रहा है। पवमान प्रभु स्वयं कवि है, अतः सत्काव्य का मूल्य आंकते हैं और प्रोत्साहन देते हैं। देख रहा हूँ, प्रभु मुझे असीम प्यार दे रहे हैं, मुझे वे 'पुरुस्पृह' अथात् बहुत स्पृहणीय मित्र मान रहे हैं। मुझे ऐसा लग रहा है कि उनसे मिलने की जितनी तृषा मेरे अन्दर थी। उससे अधिक तृषा उनके अन्दर मुझसे मिलने को ये तो मुझे पाकर सुख-विभोर हो गये हैं। मैं अनुभव कर रहा हूँ कि उन्हें स्वयं को समर्पित कर देने पर मेरी सब त्रुटियाँ और मलिनताएँ उन्होंने हर ली है। मुझे अपने सदृश निर्मल और पावन बना दिया है। स्नेहपूर्वक मेरा हाथ पकड़कर वे मुझे आनन्द-सिन्धु की तरंगों में झुला रहे हैं। इस अनुपम झूले का सुख अवर्णनीय है, इस झूले पर मैं बलिहारी हूँ।

साभार-वेदमंजरी

आर्य महासम्मेलन की तैयारी हेतु बैठक

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की २००वीं जयन्ती पर दिनांक १६, १७ व १८ नवम्बर, २०२४ को आयोजित विराट आर्य महासम्मेलन व ज्ञान ज्योति पर्व की व्यवस्था आदि के लिए आर्य गुरूकुल महाविद्यालय सिरसागंज, फिरोजाबाद में दिनांक ०४ नवम्बर, २०२४ को सभा प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा जी की अध्यक्षता में एक बैठक का आयोजन किया गया।

बैठक में स्वामी विश्वानन्द

सरस्वती, श्री रविशास्त्री, डा. सुरेन्द्र बहादुर सक्सेना, डा. उदय शर्मा मैनपुरी, श्री अरूण पाण्डेय जी प्रधान आर्य समाज मैनपुरी, श्री सुधीर दुबे जी, मैनपुरी, श्री गोपाल सिंह जी, शिकोहाबाद, श्री अखिलेश शर्मा जी, फिरोजाबाद, श्री वेद प्रकाश शास्त्री जी, श्री सोम प्रकाश शास्त्री जी, स्वामी यज्ञमुनि चतुर्वेदी जी आगरा, श्री अजीत सिंह जी, श्री गोपाल सिंह जी, शिकोहाबाद, आचार्य सत्यकाम जी, सिरसागंज आदि उपस्थित थे। सम्मेलन की सुचारु रूप से व्यवस्था के लिए लोगों ने आगे विचार व सुझाव रखे।

देवेन्द्रपाल वर्मा — प्रधान/संरक्षक
पंकज जायसवाल — मंत्री/सम्पादक
आर्य शिवशंकर वैश्य — प्रबन्ध सम्पादक

सम्पादकीय.....

ऋषि को अश्रुपूरित अन्तिम विदाई

ऋषि दयानंद ने भयंकर विपरीत परिस्थितियों मे सत्य का मण्डन और पाखंड का खंडन किया इसलिए सभी उनके विरोधी हो गये।उनके प्राण हरण की भयंकर चेष्टा की गई।जो उनके भरोसेमन्द थे वे सब निकम्मे निकले। पहले उनके साथ भरतपुर का कल्लू कहार जिस पर स्वामी जी बहुत भरोसा और उससे प्रेम करते थे ।वह छः सात सौ रूपये का माल लेकर खिड़की के रास्ते भाग गया। फिर २९ सितम्बर १८८३ को रात मे शाहपुरा निवासी धोड मिश्र रसोईया द्वारा दिये गये दूध को पीकर सोये। उसी रात मे उन्हें उदरशूल व वमन हुआ। फिर डाक्टर अलिमर्दान खां की चिकित्सा आरंभ हुई लेकिन रोग बढ़ता गया।उनके इलाज से दस्त अधिक आने लगे। लेकिन इससे भी बड़ी बात यह कि किसी आर्य समाज या अन्य को ऋषि की बीमारी की सूचना नहीं दी गई। बाद मे १२ अक्टूबर १८८३ को अजमेर के आर्य सभासद ने राजपूताना गजट मे रोग का समाचार पढा। तब दूसरे लोगों को पता लगा। लेकिन १५ अक्टूबर तक स्वामी जी की दशा पूर्णतः निराशाजनक हो गई। वहाँ से उन्हें आबू और फिर अन्त मे भक्तो के आग्रह करने पर उन्हें अजमेर पहुँचाया गया।

अजमेर पहुँचने पर डाक्टर लछमन दास ने चिकित्सा आरम्भ की लेकिन कोई लाभ न हुआ २९ अक्टूबर को हालत और खराब हो गई उनके पूरे शरीर पर फफोले पड गये।जी घबराने लगा ।बैठना चाहते थे लेकिन बैठा न गया ।अन्त मे आखिर वह दिन आया ३० अक्टूबर सन १८८३ अमावस्या संवत १९४० मंगल वार दीपावली का दिन। दूसरा डाक्टर बुलाया गया पीर इमाम अली हकीम अजमेर से बुलाये गये।बडे डाक्टर न्यूटन साहब ने भी इलाज किया ।लेकिन लाभ न हुआ ।कहते है उनका मूत्र कोयले के समान काला हो गया था।स्वामी जी ने अपने आप पानी लिया हाथ धोये दातुन की और बोले हमे पलंग पर ले चलो पलंग पर थोड़ी देर बैठे फिर लेट गये। श्वास तेज चल रहे थे जिन्हें रोककर वे ईश्वर का ध्यान करने लगे। फिर लोगो ने हाल पूछा तो कहने लगे एक मास बाद आज आराम का दिन है।इस तरह चार बज गये।स्वामी जी ने आत्मानन्द से कहा हमारे पीछे आकर खडे हो जाओ या बैठ जाओ। फिर आत्मानन्द से पूछा क्या चाहतेहो? उन्होनें कहा सब यही चाहते है कि आप ठीक हो जाय।स्वामी जी ठहर कर बोले कि यह शरीर है इसका क्या अच्छा होगा और हाथ बढाकर उसके सिर पर धरा और कहा आनन्द से रहना। फिर स्वामी जी ने काशी से आये संयासी गोपाल गिरि से भी पूछा। उसने भी यही उत्तर दिया । जब यह हाल अन्य बाहर अलीगढ मेरठ कानपुर आदि से आये लोगो ने देखा तो वे स्वामी जी के सामने आकर खडे हो गये आँखो से आंसू बह रहे थे तब स्वामी जी ने उन्हें ऐसी कृपा दृष्टि से देखा कि उसको बोला या लिखना असम्भव है। मानो ईश्वर से कह रहे हो कि हे ईश्वर मैं अपने इन बच्चो को तेरे सहारे छोडकर जा रहा हूं। और उनसे कह रहे हो उदास मत हो धीरज रखो। दो दुशाले और दो सौ रुपये भीमसेन और आत्मानन्द को देने को कहा, किन्तु उन्होनें न लिए। लोगो ने पूछा आपका चित्त कैसा है कहने लगे अच्छा है तेज व अन्धकार का भाव है।

इस तरफ साढ़े पांच बज गये स्वामी जी बोले सब आर्य जनो को बुलाओ और मेरे पीछे खड़ा कर दो केवल आज्ञा की देर थी तुरंत सब आगये। तब स्वामी जी बोले चारो ओर के द्वार खोल दो ,छत के दोनों द्वार भी खोल दिये।फिर रामलाल पण्डे से पूछा आज कौनसा पक्ष तिथि व वार है? किसी ने कहा आज कृष्ण पक्ष का अन्त और शुक्ल पक्ष काआदि अमावस्या ,मंगल वार है। यह सुनकर कोठे की छत और दिवारो पर नजर डाली फिर वेद मन्त्र पढे,उसके बाद संस्कृत मे ईश्वर की उपासना की। फिर ईश्वर का गुणगान करके बडी प्रसन्नता से गायत्री का पाठ करने लगे। फिर कुछ समय तक समाधि मे रहकर आँख खोलकर बोले-"हे दयामय, हे सर्वशक्तिमान, ईश्वर, तेरी यही इच्छा है, तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो, अहा! तैने अच्छी लीला की"। बस इतना कह स्वामी जी महाराज ने जो सीधा लेट रहे थे, स्वयं करवट ली। और एक झटके से श्वास रोककर बाहर निकाल दिया ।इस तरह कलयुग का यह महामानव शरीर रुपी पिंजरा छोडकर आर्यो को रोता बिलखता छोड़कर परलोक की यात्रा पर चल दिया। उस समय शाम के छःबजे दिवाली का दिन ३० अक्टूबर १८८३ का समय था। बाहर पंक्तिबद्ध दीपक जलते हुये मानो इस वेद रुपी ज्ञान का प्रकाश करने वाले अस्त होते सूर्य को अन्तिम विदाई दे रहे हो।

चमकेंगे जब तक ये सूरज चांद और तारे।
हम है ऋषि दयानंद तब तक ऋणी तुम्हारे ।।
ऋषिवर को कोटि - कोटी नमन।

-सोशल मीडिया से उद्धृत

गतांक से आगे.....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ चतुर्दशसमुल्लासारम्भः

अथ यवनमतविषयं व्याख्यास्यामः

११३-और शिक्षा दी हम ने उस औरत को और रक्षा की उस ने अपने गुह्य अङ्गों की। बस फूंक दिया हम ने बीच उस के रूह अपनी को॥

-मं० ४। सि० १७। सू० २१। आ० ९१॥

(समीक्षक) ऐसी अश्लील बातें खुदा की पुस्तक में खुदा की क्या और सभ्य मनुष्य की भी नहीं होतीं। जब कि मनुष्यों में ऐसी बातों का लिखना अच्छा नहीं तो परमेश्वर के सामने क्योंकर अच्छा हो सकता है? ऐसी-ऐसी बातों से कुरान दूषित होता है। यदि अच्छी बात होती तो अति प्रशंसा होती, जैसे वेदों की॥ ११३॥

११४-क्या नहीं देखा तूने कि अल्लाह को सिजदा करते हैं जो कोई बीच आसमानों और पृथिवी के हैं, सूर्य और चन्द्र तारे और पहाड़, वृक्ष और जानवर॥ पहिनाये जावेंगे बीच उस के कंगन सोने और मोती के और पहिनावा उन का बोच उसके रेशमी है। और पवित्र रख घर मेरे को वास्ते गिर्द फिरने वालों के और खड़े रहने वालों के। फिर चाहिये कि दूर करें मैल अपने और पूरी करें भेंटें अपनी और चारों ओर फिरें घर कदीम के ॥ ताकि नाम अल्लाह का याद करें॥

-मं० ४। सि० १७। सू० २२। आ० १८।२३।२६।२८।३३॥

(समीक्षक) भला! जो जड़ वस्तु हैं, परमेश्वर को जान ही नहीं सकते.फिर वे उस की भक्ति क्योंकर कर सकते हैं? इस से यह पुस्तक ईश्वरकृत तो कभी नहीं हो सकता किन्तु किसी भ्रान्त का बनाया हुआ दीखता है। वाह! बड़ा अच्छा स्वर्ग है जहाँ सोने मोती के गहने और रेशमी कपड़े पहिरने को मिलें। यह बहिश्त यहां के राजाओं के घर से अधिक नहीं दीख पड़ता। और जब परमेश्वर का घर है तो वह उसी घर में रहता भी होगा फिर बुत्परस्ती क्यों न हुई? और दूसरे बुत्परस्तों का खण्डन क्यों करते हैं? जब खुदा भेंट लेता, अपने घर की परिक्रमा करने की आज्ञा देता है और पशुओं को मरवा के खिलाता है तो यह खुदा मन्दिर वाले और भैरव, दुर्गा के सदृश हुआ और महाबुत्परस्ती का चलाने वाला हुआ क्योंकि मूर्तियों से मस्जिद बड़ा बुत् है। इस से खुदा और मुसलमान बड़े बुत्परस्त और पुराणो तथा जैनी छोटे बुत्परस्त हैं॥ ११४॥

११५-फिर निश्चय तुम दिन कयामत के उठाये जाओगे।

-मं० ४। सि० १८। सू० २३। आ० १६

(समीक्षक) कयामत तक मुर्दे कबरों में रहेंगे वा किसी अन्य जगह ? जो उन्हीं में रहेंगे तो सड़े हुए दुर्गन्धरूप शरीर में रहकर पुण्यात्मा भी दुःख भोग करेंगे? यह न्याय अन्याय है। और दुर्गन्ध अधिक होकर रोगोत्पत्ति करने से खुदा और मुसलमान पापभागी होंगे॥११५॥

११६-उस दिन की गवाही देवेंगे ऊपर उन के जबानें उन की और हाथ उन के और पांव उन के साथ उस वस्तु के कि थे करते अल्लाह नूर है आसमानों का और पृथिवी का, नूर उस के कि मानिन्द ताक की है बीच उस के दीप हो और दीप बीच कंदील शीशों के हैं, वह कंदील मानो कि तारा है चमकता, रोशन किया जाता है दीपक वृक्ष मुबारिक जैतून के से, न पूर्व की ओर है न पश्चिम की, समीप है तेल उस का रोशन हो जावे जो न लगे ऊपर रोशनी के मार्ग दिखाता है अल्लाह नूर अपने के जिस को चाहता है।

- मं० ४। सि० १८। सू० २४। आ० २४।३५॥

(समीक्षक) हाथ पग आदि जड़ होने से गवाही कभी नहीं दे सकते यह बात सृष्टिक्रम से विरुद्ध होने से मिथ्या है। क्या खुदा आगी बिजुली है? जैसा कि दृष्टान्त देते हैं ऐसा दृष्टान्त ईश्वर में नहीं घट सकता। हां! किसी साकार वस्तु में घट सकता है॥११६॥

११७-और अल्लाह ने उत्पन्न किया हर जानवर को पानी से बस कोई उन में से वह है कि जो चलता है पेट अपने के और जो कोई आज्ञा पालन करे अल्लाह की रसूल उस के की, कह आज्ञा पालन करे खुदा की रसूल उस के की और आज्ञा पालन करो रसूल की ताकि दया किये जाओ -

मं० ४। सि० १८। सू० २४। आ० ४५। ५२।५६॥

(समीक्षक) यह कौन सी फिलासफी है कि जिन जानवरों के शरीर में सब तत्त्व दीखते हैं और कहना कि केवल पानी से उत्पन्न किये। यह केवल अविद्या की बात है। जब अल्लाह के साथ पैगम्बर की आज्ञा पालन करना होता है तो खुदा का शरीक हो गया वा नहीं? यदि ऐसा है तो क्यों खुदा को लाशरीक कुरान में लिखा और कहते हो ?॥११७॥

११८-और जिस दिन कि फट जावेगा आसमान साथ बदली के और उतारे जावेंगे फरिश्ते। बस मत कहा मान काफिरों का और झगड़ा कर उन से साथ झगड़ा बढ़ा और बदल डालता है अल्लाह बुराइयों उन की को भलाइयों से और जो कोई तोबाः करे और कर्म करे अच्छे बस निश्चय आता है तरफ अल्लाह की॥

- मं० ४। सि० १९। सू० २५। आ० २५-५२।७०।७१

(समीक्षक) यह बात कभी सच नहीं हो सकती है कि आकाश बद्दलों के साथ फट जावे। यदि आकाश कोई मूर्त्तिमान् पदार्थ हो तो फट सकता है। यह मुसलमानों का कुरान शान्ति भङ्ग कर गदर झगड़ा मचाने वाला है। इसीलिये धार्मिक विद्वान् लोग इस को नहीं मानते। यह भी अच्छा न्याय है कि जो पाप और पुण्य का अदला बदला हो जाय। क्या यह तिल और उड़द की सी बात है जो पलटा हो जावे ? जो तोबा करने से पाप छूटे और ईश्वर मिले तो कोई भी पाप करने से न डरे। इसलिये ये सब बातें विद्या से विरुद्ध हैं॥ ११८॥

क्रमशः अगले अंक में...

ऋषि दयानन्द आज

(महर्षि बलिदान दिवस पर विशेष)

-डॉ. धर्मवीर जी

ऋषि दयानन्द का होना इस देश के इतिहास की अद्भुत घटना है। इतिहास में स्मरण उसी को रखा जाता है जो सामान्य से भिन्न है। ऐसी घटनायें बहुत होती हैं तथा उनमें तुलना करना कठिन होता है। तुलना करने का एक ही आधार हो सकता है, किसी व्यक्ति के विचार और कार्य कितने महत्त्वपूर्ण और कितने समय तक प्रभावकारी हैं। महापुरुषों ने जो भी कार्य किया, अपने समय में अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपनी समस्याओं के समाधान का यत्न किया। इन लोगों के कार्य की सीमा और कार्य दृष्टि उनके समाज और वर्ग तक रही, उनके विचार भी तत्कालीन परिस्थिति में एक देश की सीमा तक बन्धे रहे हैं।

आज के संसार के इतिहास में सबसे अधिक प्रभावित करने वाले महापुरुषों में महात्मा ईसा, हजरत मुहम्मद, भगवान बुद्ध और भगवान महावीर हैं, आगे यह परम्परा लम्बी हो सकती है परन्तु विचार की अपेक्षा से कम भिन्नता है। ईसा का धर्म बढ़ा तो बहुत परन्तु उसके अन्दर दूसरे के विचार को बलात् परिवर्तन की परम्परा बहुत पुरानी है। ईसाइयत के प्रचार-प्रसार के लिए किये गये प्रयत्नों में प्रलोभन और हिंसा का आश्रय लेने में कभी संकोच नहीं किया गया। आज भी सभ्यता के युग में अपने को सभ्यता का संरक्षक मानने वाला चर्च तभी तक सभ्य दीखना चाहता है जब तक उस क्षेत्र में निर्बल है, जैसे ही समाज संख्या बल बढ़ा लेता है तब दूसरे विचारों का अस्तित्व समाप्त करने में कोई कमी नहीं करता। विचारों को मनवाने में हजरत मुहम्मद का कोई मुकाबला नहीं। आज इस्लाम के मानने वालों की संख्या और प्रभाव क्षेत्र संसार में बहुत व्यापक है। इस विचारधारा का जन्म ही असहिष्णुता के बीज से हुआ है। हजरत मुहम्मद ने शिष्यों को उपदेश दिया परन्तु अपने विचारों पर प्रश्न करने का अधिकार किसी को नहीं दिया। जो कहा और जो किया, बस वही अन्तिम है। वह अपने समाज का राजा, सेनापति, न्यायाधीश तीनों है। आज भी इस्लाम के अनुयायी अपने को श्रेष्ठ इसलिए मानते हैं कि उनके पास तुलना करने के लिए कुछ भी नहीं है, वे किसी अन्य विचार की सत्ता ही स्वीकार नहीं करना चाहते, तुलना का प्रश्न ही कहाँ उत्पन्न होता है। इस्लाम के संस्थापक में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जिसको और लोग धर्म की आड़ लेकर करते हैं, मोहम्मद ने उसे ही धर्म घोषित कर दिया। दुनिया में हिंसा को अधर्म माना जाता है परन्तु धर्म के नाम पर हिंसा की जाती है, मोहम्मद ने हिंसा को ही धर्म घोषित कर दिया, वह चाहे प्राणियों की बलि देना हो या काफिर कहकर किसी व्यक्ति का कत्ल करना हो। इस तरह मन की हिंसक प्रवृत्ति को धर्म के नाम पर खुली छूट है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात है कि संसार के सभी मत प्रवर्तक इन्द्रियों के संयम की बात करते हैं, संयम करने के उपायों को साधना में सम्मिलित करते हैं परन्तु मोहम्मद साहब ने अधिक विवाह करने और असीमित सन्तान उत्पन्न करने की छूट ही नहीं दी अपितु उनके आदेशों का पालन करने वालों को जन्नत में हूरों की कल्पनायें कर संसार के सुखों की वहाँ पूर्ति का प्रलोभन भी दे दिया। ऐसी परिस्थिति में मनुष्य अपने विचारों का नियन्त्रण व संयम करने की बात ही कैसे सोच सकता है। मोहम्मद की तीसरी विशेषता है, जहाँ दूसरे लोग उपासना द्वारा संसार से विरक्त होने और मोक्ष की बात करते हैं, इसलिये उपासना व्यक्तिगत रूप से एकान्त में करने की प्रेरणा देते हैं, वहाँ उपासना इस्लाम की सेना की छावनी है। नमाज से आत्मिक उन्नति तो नहीं होती परन्तु इस्लाम की सामाजिक संरचना को बल अवश्य मिलता है। यही कारण है नमाज के नाम पर युद्धोन्माद की प्रवृत्ति देखी जाती है। जैसे सैनिक को अपनी बुद्धि से काम करने का अवसर और अधिकार नहीं होता, वैसे ही इस्लाम के अनुयायी को सोचने का अधिकार नहीं है। मोहम्मद ने ईश्वर उपासना की बात की है, परन्तु मोहम्मद के बिना ईश्वर का कोई अस्तित्व नहीं। मोहम्मद की अनुमति ही ईश्वर का आदेश है। इसलिए मुसलमान उपासना में ईश्वर के साथ मोहम्मद को याद करता है और खुदा को सब जगह हाजिर-नाजिर मानने पर भी काबा की ओर मुख करना ईश्वर की उपासना समझता है, क्योंकि काबा मोहम्मद का जन्म स्थान है। आज संसार में इस्लाम प्रचार तलवार के बल पर ही अधिक हुआ है।

धर्म का सम्बन्ध विचारों से है। विचारों का प्रचार करके अपने अनुयायियों को सहमत करने की परम्परा भारत में ही अधिक स्वीकार्य है। पुराने समय में भगवान महावीर और भगवान बुद्ध ने अहिंसा, दया, संयम आदि के प्रचार से मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों को जगाने का प्रयास किया। भारत के बाहर मोहम्मद धार्मिक होकर राजा बनने में विश्वास रखते हैं, वहाँ महावीर और बुद्ध राजा होकर भी फकीर होने में विश्वास करते हैं, यही मौलिक अन्तर है। आगे चलकर इनके अनुयायियों ने भी राज सत्ता को प्राप्त करके, अन्य धर्मों की भाँति बल प्रयोग से अपने विचारों को फैलाने का प्रयास किया। मौलिक रूप से संस्थापकों का विश्वास विचारों के प्रसार में रहा है, उपदेश से हृदय परिवर्तन कराने का ही पूरे जीवन उन्होंने प्रयास किया।

इस देश में जैन और बौद्ध विचारधारा का बहुत प्रचार और विस्तार होने पर भी यहाँ का मौलिक विचार नहीं बना। इसका कारण, इस देश की परम्पराओं और विचारों के विरोध स्वरूप इन विचारों का जन्म हुआ। इस देश की धार्मिक परम्परा आस्तिकता में विश्वास करती है। किसी सत्ता के होने में उसका विश्वास है जिसका माध्यम है- वेद और ईश्वर। जो वेद को और उसके देने वाले ईश्वर को मानता है, वह आस्तिक है और जो इनमें से किसी एक की या दोनों की सत्ता से इन्कार करता है उसे नास्तिक कहा गया है। किन्तु इनका मौलिक विचार नहीं है यह प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न विचार है। इस्लाम और ईसाइयत के इस देश में आने से पहले यह वैचारिक संघर्ष इस देश में प्रारम्भ हो गया था। सत्ता के द्वारा किसी विचार के पोषण होने पर भी सामान्य जनता में इनकी स्वीकार्यता और अस्वीकार्यता प्रचार पर ही आधारित थी। सत्ता के कारण एक समय ऐसा आया जब इस देश से परम्परागत धर्म की मान्यता क्षीण प्राय हो गई। उस समय सत्ता के मुकाबले सन्तों ने संघर्ष किया। जहाँ युद्ध और शस्त्र से जय-पराजय होती थी वहाँ आचार्य शंकर ने शास्त्रार्थों से जय-पराजय का निश्चय कराया, उनके प्रचार का इतना प्रभाव हुआ कि इस देश में बौद्ध और जैन मतों का पराभव हुआ और ब्राह्मण धर्म की फिर से स्थापना हुई। जब ब्राह्मण धर्म की आचार्य शंकर ने फिर से स्थापना कर दी और लम्बे समय तक उसका वर्चस्व बना रहा, फिर भी इस देश में विचारधारा के पतन के साथ राज सत्ता का भी पतन होने लगा तब इस समाज में जो ब्राह्मण धर्म, जैन और बौद्धों को पराजित कर अपना वर्चस्व स्थापित कर चुका था वही धर्म इसी देश में ईसाइयत और इस्लाम के आने से पराजित होने लगा, वेदानुयायियों में आत्महीनता घर करने लगी, दिन प्रतिदिन इनके वर्चस्व के साथ इनकी संख्या भी घटने लगी। विदेशी सत्ता में, मुसलमानों ने इस्लाम का और अंग्रेजों ने इस देश में ईसाइयत का प्रचार किया। तब इस देश के समाज में जो संकट खड़ा हुआ वह केवल राजनैतिक पराधीनता का नहीं था अपितु धार्मिक दासता का भी था। जो लोग मुसलमान हो गये थे वे इस्लामी शासक को विदेशी होने पर भी अपना मानते थे, अपने साथ रहने वाली इस्लामेतर प्रजा को विधर्मी व काफिर कहकर अपना शत्रु समझते थे। यही स्थिति ईसाई लोगों की थी, वे ईसाई बनकर अपने को अंग्रेजों का छोटा भाई कहते थे तो हिन्दुओं के प्रति उनके मन में घृणा और परायापन बढ़ रहा था। ऐसी परिस्थिति में इस देश को धार्मिक और राजनीतिक दोनों ही सत्ताओं ने पराया बना दिया था। अज्ञानग्रस्त जनता और स्वार्थ व पाखण्ड में लिप्त धर्माचार्य न तो इस देश के धर्म को बचाने में समर्थ थे, न विदेशी सत्ता का प्रतिकार करने का विचार ही उनके मन में था।

देश और समाज किंकर्तव्यविमूढ़ बना हुआ नियति समझकर इस दासता की परिस्थितियों को स्वीकार कर बैठा था, ऐसे समय पर ऋषि दयानन्द का इस देश की धरा पर अवतरण हुआ। ऋषि दयानन्द को कार्यक्षेत्र में उतरते ही यह समझने में देर नहीं लगी कि इस देश के पतन का कारण क्या है? देश के आन्तरिक और बाह्य शत्रु कौन हैं? भारत की पराधीनता के समय में जितने भी समाज सुधारक, विचारक, धार्मिक नेता, साधु-सन्त हुए हैं, उनमें ऋषि दयानन्द की विलक्षणता इस बात में है कि इस देश की राजनैतिक और धार्मिक दासता से समान रूप से इस देश की जनता को मुक्त कराना। इसके लिए उन्होंने जो मार्ग चुना वह न तो शंकराचार्य का ब्राह्मण धर्म था, न बौद्ध और जैन का ब्राह्मण विरोधी नास्तिकवाद, न ही विदेशी राजसत्ता से पालित-पोषित ईसाइयत या इस्लाम ही उनके आदर्श थे। सबसे पहले उन्होंने इस देश की आधारभूत विचारधारा के जनक वेद, शास्त्र एवं वैदिक साहित्य का स्वयं गहरा अध्ययन किया और ब्राह्मणवाद के रूप में झूठ, पाखण्ड, जो स्वार्थ की पूर्ति के लिये ब्राह्मणों ने वेद पर थोपा था उससे ऋषि दयानन्द ने वेदों को मुक्त कराया, वेदों के वास्तविक अर्थ और प्रयोजन को जनता और धर्माचार्यों, विद्वानों के सामने रखा। ब्राह्मणों द्वारा वेद पढ़ने पर लगाये गये प्रतिबन्ध को ऋषि दयानन्द ने वेदों को मानव मात्र के लिए ग्राह्य और स्वीकार्य बना दिया। इस तरह इस देश की आत्मा का प्रकाश ऋषि दयानन्द ने किया। इस देश में ऋषि दयानन्द के आसपास जितने वेद- समर्थक या वेद-विरोधी थे उनका दुर्भाग्य यह था कि वे स्वयं वेद पढ़ने के स्थान पर दूसरे के तर्कों, विचारों को आधार बनाकर वेद का समर्थन या विरोध करते थे परन्तु ऋषि दयानन्द ने स्वयं वेदों का अध्ययन कर वेद समर्थकों के और विरोधियों के उन विचारों का तर्क और वेद के प्रमाणों से विरोध कर के वेद की सत्यता को प्रतिष्ठित किया। यही उनका विचार इस देश की सभ्यता संस्कृति को बचाने का और देश के गौरवपूर्ण इतिहास को प्रकाशित करने का आधार बना।

जब एक बार वेद के यथार्थ सत्य विचार ऋषि दयानन्द को प्राप्त हो गये, तब उन्हें न पाखण्डी, स्वार्थी वेद समर्थकों से शास्त्रार्थ करने में कठिनाई हुई, न वेद विरोधी जैन, बौद्ध, ईसाइयत और इस्लाम की गलत परम्पराओं, मान्यताओं, सिद्धान्तों पर आक्रमण करने में संकोच ही हुआ। ऋषि दयानन्द को किसी राजसत्ता से कभी भय नहीं लगा। उन्होंने सदा सत्य को स्वीकार किया और सत्य के ग्रहण करने के लिए सबको प्रेरित किया। वेद और ईश्वर दोनों के सत्य, वास्तविक स्वरूप को प्रकाशित करने में जीवनभर प्रयत्नशील रहे। माता-पिता के समान सुख देने वाली विदेशी सत्ता की तुलना में कम अच्छे स्वराज्य को सर्वोपरि बताया। धार्मिक अन्धविश्वास और पाखण्ड का वह चाहे अपनों का हो या दूसरों का उसके खण्डन करने में तनिक भी देर नहीं लगाई। ऋषि दयानन्द को सभी साधकों, सन्तों, विचारकों से पृथक् करने वाली बात है, वे मनुष्य मात्र को ज्ञान, शिक्षा, सत्कर्मों का अधिकार देते हैं। इतना ही नहीं वे अपने अनुयायियों को कुछ भी बिना परीक्षा किये स्वीकार न करने का आदेश देते हैं। यह वह अधिकार है जो अधिकार कोई गुरु अपने शिष्यों को देने के लिए तैयार नहीं होता। ऋषि दयानन्द की इस वैचारिक क्रान्ति का दिग्दर्शन हमें उनकी अमरकृति सत्यार्थप्रकाश में होता है। अब तक धार्मिकता के नाम पर सबका आदर करने, सबके साथ समभाव रखने का पाठ पढ़ाया जाता था परन्तु ऋषि ने सभी मत-पन्थों का अध्ययन किया और उनके मिथ्या आडम्बर और गलत सिद्धान्तों की बखिया उधेड़ कर रख दी। विदेशी धर्मों की सिद्धान्त विरुद्ध बातों और पाखण्डों का भी उसी प्रकार निराकरण किया। परिणामस्वरूप आजतक भी वह तिलमिलाहट समाप्त नहीं हुई। आज भी ऋषि के सिद्धान्तों का अनुसरण करते हुए भारतीयों को नये मत-सम्प्रदायों का भी अध्ययन कर उनका खण्डन करने की उतनी ही आवश्यकता आज है जितनी ऋषि दयानन्द के समय थी। इस्लाम और ईसाइयत का जिस तरह से आक्रमण हो रहा है, उनके षड्यन्त्रों का अध्ययन कर एक बार फिर सत्यार्थप्रकाश के तेरहवें और चौदहवें समुल्लास को लिखने और पढ़ने की आवश्यकता है। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के रूप में एक शैली प्रदान की है जो वेदों के यथार्थ स्वरूप को प्रकाशित करने के लिए प्रेरित करती है और अन्तिम चार समुल्लासों के रूप में दुनिया के हर पाखण्ड का विरोध करने का बल प्रदान करती है। जितने प्रासंगिक ऋषि दयानन्द तब थे उतने ही प्रासंगिक आज भी हैं। लोकनाथ तर्क वाचस्पति के शब्दों में-**या कांक्षर्षिवरेण चेतसि कृता किन्तु स्वार्थ विवर्जिताः सुनिपुणाः। खंजाश्व विकलं प्रताड्य कशया सर्वेषा करुणा विवेकजलधेः।।**

हे नाथ सो दूर है, जो लोक संघी डटे।
दौड़ाय लेंगे कभी, स्वामी दयानन्द की।।

(साभार-कहाँ गये वो लोग)

शारदीय नवशस्येष्टि दीपावली पर्व का वैदिक स्वरुप

–आचार्य राहुलदेवः

हमारे भारत देश में पर्वों का बहुत महत्व है। पूरे संसार के लोग भारत को पर्वों का देश मानते हैं। कहते हैं कि यहाँ हर दिन कोई न कोई पर्व होता है। किन्तु पर्व क्यों मनाया जाता है? कौन से पर्व की क्या विशेषता होती है? और पर्व किसे कहते हैं। ये हमें जानना चाहिए। जिससे हम अपने सन्तानों और शिष्यों को अच्छे से समझा सके। दीपावली पर्व को लेकर भी विश्व भर में फैले सनातन धर्म को मानने वाले हिन्दुओं में भ्रान्तियाँ फैली हुई है। सबसे बडी भ्रान्ति यह है कि दीपावली के दिन भगवान राम चौदह वर्ष के वनवास के पश्चात् अयोध्या लौटे थे। तब अयोध्या वासियों ने भगवान राम के लौटने की खुशी में दीपक जलाए थे आनन्द, हर्ष और उत्सव मनाया था। और तब से दीपावली मनाई जाती हैं। किन्तु यह प्रमाण विरुद्ध बातें है। पूरे विश्व में जितनी भी प्रसिद्ध, प्राचीन या प्रामाणिक रामायण उपलब्ध है। उनमें किसी में यह नहीं लिखा कि भगवान राम कार्तिक की अमावस्या को लौटे थे। आज जब लोग अपने आप को पढ़े-लिखे, समझदार और शिक्षित मानते हैं। तो सुनी सुनाई अप्रमाणिक बातों पर विश्वास क्यों करते हैं? जो भगवान राम भारत की संस्कृति सभ्यता के प्राण हैं। पूरा भारत देश जिस भगवान की इतनी पूजा प्रतिष्ठा करता है उस महापुरुष के बारे में हम भारत के लोग सामान्य जानकारी भी नहीं रखते हैं। विश्व पटल पर बुद्धिमानों की सभा में हम भगवान राम को कैसे प्रतिस्थापित करेंगे? क्या हम भारत वासियों को राम के बारे में सामान्य जानकारी भी नहीं है। कि भगवान राम अयोध्या कब लौटे थे? ये हम राम के वंशजो के लिए कितनी हास्यास्पद और दुर्भाग्य की बात है। बस हम सुन लेते हैं और आगे बोलने लग जाते हैं एकबार हम अपने शास्त्रों को उठाकर देखने का प्रयास भी नही करते हैं।

आइये रामायण में देखते हैं –

पूर्णे चतुर्दशे वर्षे पंचम्यां लक्ष्मणाग्रजः। भरद्वाजाश्रमं प्राप्य ववन्दे नियतो मुनिम्–

अर्थ– वनवास के चौदह वर्ष पूरे हो जाने पर चैत्र शुक्ल पंचमी के दिन श्रीराम भरद्वाज के आश्रम में पहुँचे और उन्हें यथाविधि प्रणाम किया।

देखिए क्या लिखा है, चैत्र मास शुक्ल पक्ष की पंचमी को भगवान राम अयोध्या पहुंचे हैं। फिर यह भ्रामक प्रचार कैसे हुआ कि दीपावली में आए थे। इसका कारण है ये टी वी, सीरियल और फिल्म वाले, वे बोल देते हैं और लोग वहीं से सुन लेते है, क्योंकि उनका प्रचार व्यापक है, तो उनकी बातें भी अधिक फैल जाती है। जबकि दीपावली तो भगवान राम के पूर्वज भी मनाते थे। इसलिए दीपावली पर्व कोई ऐतिहासिक पर्व नहीं है, इतिहास की किसी घटना के कारण दीपावली मनाना प्रारम्भ नहीं किया गया है। दीपावली भौगोलिक और सामाजिक पर्व है। भूगोल से मेरा तात्पर्य ऋतुओं से हैं। दीपावली का सम्बन्ध शरद ऋतु से है। क्योंकि भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ पर वर्षा ऋतु में मुख्य फसल उगाई जाती है और वह फसल शरद् ऋतु में प्राप्त होती है। उसी फसल की आगमन पर प्रसन्नता का पर्व है दीपावली।

दीपावली का सनातन और वैदिक नाम है – ''शारदीय नवशस्येष्टि दीपावली पर्व'' है। जिसका शाब्दिक अर्थ है ''शरद् ऋतु की नई फसल का यज्ञ''। शरद् ऋतु में आई हुई फसल को सामूहिक रुप से एक निश्चित तिथि पर अर्थात् कार्तिक अमावस्या के दिन हवन करके, उसमें नई फसल को हवन सामग्री में मिलाकर, पहला भाग देवताओं को देने और भोग लगाने का नाम है ''शारदीय नवशस्येष्टि''। इसलिए आप देखते होंगे दीपावली में बाजार में खोई, नया धान, बताशा, तेल और भिन्न प्रकार के दलहनों की धूम रहती है। यही शस्य (फसल) नवीन अनाज दीपावली ''शारदीय नवशस्येष्टि'' के प्रतीक हैं।

दूसरी बात दीपावली एक सामाजिक पर्व है। हमारा समाज योग्यता और कर्म के आधार पर चारों भागों में विभक्त है। इनमें एक महत्वपूर्ण भाग है वैश्य। वैश्य समाज में दो भाग है व्यापारी और कृषक। दीपावली पर्व धन धान्य समृद्धि का पर्व है। व्यापारी और कृषक मिलकर समाज को समृद्ध बनाते हैं। जब व्यापारी लोग वस्तुओं का उत्तमता से उत्पादन, विनिमय, क्रय-विक्रय, आयात-निर्यात करते हैं तब वह वस्तु सर्वसामान्य तक पहुँचती है। इस प्रकार से समाज में समृद्धि आती है। वैश्य का कर्तृतव्य है कि वह समाज से अभाव को दूर करे।

दीपावली के दिन लक्ष्मी पूजन की महिमा है। लक्ष्मी, धन-धान्य की प्रतीक है। रुपये, पैसे, सोना, चाँदी, हीरे, आभूषण, मूल्यवान वस्तुएं, घर, जमीन, जायदाद, दुकान, व्यापार उद्योग आदि सब लक्ष्मी ही के रुप है। इसके अतिरिक्त स्त्री रुप धारण की हुई कोई और सत्ता नहीं होती जिसकी मूर्ति बनाकर उससे कुछ मांगा जाए। देने वाला वह ईश्वर है, जो हमारे पुरुषार्थ, प्रारब्ध और कर्मों के आधार पर हमें देता है। वेदों में अनेक मन्त्र मिलते हैं जिसमें लक्ष्मी शब्द आता है वहाँ पर धन धान्य, सुख साधन और पदार्थों को ही लक्ष्मी कहा है, लक्ष्मी का शाब्दिक अर्थ है जो लक्ष्य सिद्धि में सहायक हो। जिससे हमारे पारिवारिक, शारीरिक, सांसारिक, सामाजिक और धार्मिक लक्ष्य सिद्ध हों, उन सारे भौतिक पदार्थों का नाम ही 'लक्ष्मी' है। मनुष्य इन पदार्थों को परिश्रम से प्राप्त करके लक्ष्मी पति या लक्ष्मीवान् कहाता है। किन्तु, मनुष्य को प्राप्त और अप्राप्त जो कुछ इस संसार में है, पहले था, और आगे होगा। उन सबका वास्तविक स्वामी परमात्मा है। इसलिए परमेश्वर का नाम ''लक्ष्मी'' भी है। वैसे भौतिक पदार्थों में सबसे पहली लक्ष्मी होती है शस्य (फसल) यही लक्ष्मी का सबसे पहला रुप है। क्योंकि उसके बिना जीवन सम्भव नहीं है, लोग आजकल (करेन्सी) रुपये को लक्ष्मी मानते हैं। मैं पूछता हूँ? जब नोट चलन में नहीं थे तब लक्ष्मी नहीं होती थी क्या? तब सिक्के चलन में होते थे। जब सिक्के भी प्रचलन में नहीं होते थे तब लक्ष्मी नही होती थी क्या? होती थी? तब घर से धान ले जाते गेहूँ ले जाते और बदले में दुकान से तेल, शक्कर इत्यादि लाते थे। उस हिसाब से धान और गेहूँ आदि अनाज ही 'लक्ष्मी' हुए। इसलिए उस अन्न रुपी लक्ष्मी को अपने दुकान में खोई, बताशा, धान, दलहन इत्यादि के रुप में हवन के द्वारा देवताओं को भोग लगाना ही 'लक्ष्मी पूजा' है।

इस संसार में समुद्र को कोई भी व्यक्ति मथ नहीं सकता। समुद्र का मन्थन हास्यास्पद है कभी कोई ऐसी मशीन बन ही नही सकती जो हजारों कि.मी फैले हुए सात समुद्र को मथ सके, मथने से वही चीज बाहर आती है जो पहले से विद्यमान होती है, समुद्र की नीचे भी पहाड और जमीन है और समुद्री जीव है। वहाँ कोई अमृत और विष नहीं होता। मथने से कोई स्त्री (लक्ष्मी) प्रकट नहीं हो सकती। यदि आपको विश्वास नहीं हो तो एक ड्रम पानी समुद्र का लाकर मथ के देख लो कोई अमृत, विष कुछ नहीं निकलेगा। न लक्ष्मी प्रकट होगी। लक्ष्मी तो तब प्रकट होती है, जब व्यक्ति दिन रात भाग दौड करता है, परिश्रम करता है, पसीना बहाता है, पढाई लिखाई पर मेहनत करता है और बुद्धिमत्ता से कार्य करता है। तब व्यक्ति अच्छे पद पर पहुँचता है, लक्ष्मीवान और धनवान बनता है। सम्पूर्ण संसार में लोग धनवान होने और सफल होने का यही तरीका मानते हैं।

दीपावली का शाब्दिक अर्थ है 'दीपों की अवली' माने 'दीपों की पंक्ति' अधिक मात्रा में दीपक लगाना या सजावट करना 'दीपावली' कहालाती है। दीपावली के दिन दीपक क्यों जलाते हैं? क्योंकि यह पर्व अमावस्या को मनाया जाता है। अमावस्या 'रात्रि और अन्धकार' का प्रतीक है और दीपक 'प्रकाश' का प्रतीक है। इसलिए ''तमसो मा ज्योतिर्गमय'' हम अन्धकार से प्रकाश की ओर चलें। दीपावली का यही सन्देश है कि हमारे मन, परिवार, व्यापार, समाज से अन्धकार, अज्ञान का नाश हो और प्रकाश अर्थात् ज्ञान का विस्तार हो। किन्तु यज्ञ सबसे बडा देवपूजा का साधन है। यज्ञ (हवन) प्रकाश, सुगन्धी, पुष्टि और शुद्धि का आधार है, यज्ञ से ही सभी देवताओं को भोग लगाना और उनकी पूजा सम्भव है। इसलिए हम दीपावली में 'शारदीय नवशस्येष्टि' का यज्ञ करके बडे हर्षोल्लास के साथ दीपावली मनाएँ। क्योंकि ''पर्वति पूरयति जनान् आनन्देन स पर्वः'' जो हमें पूर्ण करे और हमें आनन्द से भर दे, उसे ही 'पर्व' कहते हैं।

ईश्वर की सन्ध्या, उपासाना, ध्यान, स्वाध्याय, अपने दैनिक कार्य, व्यापार, नौकरी आदि को प्रसन्नता, परिश्रम और पुरुषार्थ पूर्वक करना। पर्वों को यज्ञ पूर्वक मनाना। यही श्रेष्ठ भारतीय की पहचान है, जो पूर्ण तार्किक और वैज्ञानिक रुप से अपने पर्वो को मनाते हैं। और सम्पूर्ण विश्व को मानवता, सद्भावना, प्रेम, शान्ति और सौहार्द का सन्देश देते हैं। यही ईश्वर का आदेश और वेद का विधान है।

तो आइए! सही और तार्किक ज्ञान का प्रचार करें। भारतीय पर्व और संस्कृति के सही अर्थ को समझें और अपनी विरासत पर गर्व करें। इस बार Happy Diwali की जगह शुभ दीपावली कहें।

चलभाष–९६८१८४६४१६

शोक समाचार

● आर्य समाज नंद ग्राम, गाजियाबाद के प्रधान श्री प्रेमपाल सिंह आर्य का असामायिक निधन दिनांक ३१ अक्टूबर, २०२४ को इनके निज निवास में हो गया।

स्व. प्रेमपाल सिंह जी आर्य, आर्य समाज के कर्मठ व सक्रिय कार्यकर्ता थे। उनके निधन से आर्य समाज की अपूर्णनीय क्षति हुई है। आर्य समाज में उनका सहयोग सदैव स्मरणीय रहेगा।

● आर्य समाज कायमगंज के पुरोहित एवं सँस्कृत विद्यालय शाहजहाँपुर के आचार्य पंडित शैलेश शास्त्री जी का दिनांक ०१ नवम्बर, २०२४ को उनके पैतृक गाँव पिपहैरा जैथरा जनपद एटा में विद्युत आघात से अचानक मृत्यु हो गयी।

महर्षि की विचारधारा के प्रबल पोषक स्व. आचार्य शैलेश जी का परिणय अभी कुछ माह पूर्व ही हुआ था। ईश्वर के अटल नियम के आगे हम सभी नतमस्तक है। युवा आचार्य से भविष्य की आशायें चरम पर थीं, परन्तु उनके देहान्त से हम सभी स्तब्ध व आवाक है जो क्षण भर में धूमिल हो गयीं है।

● आर्य समाज, सासनी के संरक्षक श्री दयानंद शिक्षा समिति, सासनी के पूर्व प्रबन्धक एवं जी.के.एल. जैन इंटर कालेज के पूर्व प्रवक्ता, कई ज्ञान वर्धक पुस्तकों के लेखक श्री जगदीश प्रसाद जायसवाल का लगभग ९० वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया।

स्व. जगदीश प्रसाद जायसवाल एक शिक्षा विद्, समाज सेवी व आर्य समाज के प्रति समर्पित सेवा भाव के रूप में सदैव याद किये जायेंगें।

आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा एवं समस्त पदाधिकारीगण दिवंगत आत्माओं को अपनी शोक संवेदनायें व्यक्त करते हुए ईश्वर से उनके मोक्ष एवं परिजनों को यह असहनीय दुःख सहने की शक्ति देने की प्रार्थना करते हैं।

महर्षि के जीवन पर एक दृष्टि–ऋषि दर्शन

-स्व. श्री पं. चमूपति

(स्वामी दयानन्द के बलिदान दिवस के अवसर पर प्रकाशित)

ऋषि दयानन्द की जन्मभूमि होने का गौरव गुजरात प्रान्त को है। पिता जन्म के ब्राह्मण थे, और भूमिहारी तथा जमीदारी का कार्य करते थे। शिव के बड़े भक्त थे। शिवरात्रि के दिन बालक को मन्दिर में ले गए और उसे उपवास करा जागरण का आदेश दिया। जब बड़े-बड़े शिव-भक्त सो गए, यह भावी ऋषि प्रयत्नपूर्वक जागता रहा। गीता के कथनानुसार-

"या निशा सर्वभूतानां तस्यां
जागर्ति संयमी।"

इनके हृदय में भक्ति का नया उदय हुआ था। यह इसी रात में शिव को रिझा लेना चाहते थे। नींद आती पर पानी के छींटों से उसे दूर भगाते। इतने में एक चूहे ने सचेत किया! उस क्षुद्र पशु को महान् पशुपति के आगे उद्धत होता देखकर विचार आया- हो न हो यह शिव नहीं। दूसरों का व्रतभंग आलस्य ने किया था इनका तर्क ने। तर्क जीवन की भूमिका थी, आलस्य मौत की। शिवरात्रि बीत गई, परन्तु शिवरात्रि की घटना हृदय में गड़-सी गई।

मूलशंकर के बढ़ते यौवन को दूसरी चेतावनी उनके चाचा और भगिनी की मृत्यु से मिली। चाचा के लाडले थे, उनका वियोग सहा न जाता था, भगिनी को महामारी ने मारा। इन दो मौतों का प्रभाव एक-सा नहीं हुआ। प्रथम, मृत्यु पर आश्चर्य चकित रहे और पाषाण-हृदय की उपाधि पाई, दूसरी पर बिलख-बिलख कर रोए।

शिक्षा और गृहत्याग- मूलशंकर की शिक्षा का प्रबन्ध इनके बाल्यकाल में किया गया था। इन्हें यजुर्वेद कण्ठस्थ था और भी बहुत कुछ पढ़ा-लिखा करते थे। पिता को पता लगा कि बालक पर वैराग्य का भूत सवार है। महात्मा बुद्ध के पिता की तरह इन्हें विवाह की डोरों में फांसने की ठानी। परन्तु ठीक विवाह की रात्रि को मूलशंकर घर से लुप्त हो गए।

वन यात्रा- मूलशंकर की कथा बहुत लम्बी है। पहले तो किसी ने ठग लिया। इन्हें शुद्ध चेतन नाम देकर नैष्ठिक ब्रह्मचारी बनाया। फिर यह संन्यासी हुए और दयानन्द नाम पाया। योगियों के पास योग साधना सीखते रहे। समाधि का आनन्द लाभ किया। गिरी-गुहाओं में घण्टों बिताए। पुस्तकें खोजीं और उनका अध्ययन किया। मैदानों में सोए, वृक्षों की शाखाओं में विश्राम किया। मूलकन्द खाकर भूख मिटाई। सार यह कि पूर्ण वनचर का-सा जीवन व्यतीत किया।

गुरु विरजानन्द के चरणों में ३६ वर्ष से ऊपर के थे जब दण्डी विरजानन्द के द्वार पर विद्यावित्त के भिक्षु हुए। वहां पहली भेंट यह करनी पड़ी कि जो पुस्तक पढ़े हैं सब यमुना मय्या के अर्पण करो। हाथ लिखे पुस्तक बड़ी कठिनता से हाथ आए थे। पर गुरु-मुख का उपदेश भी तो सुलभ न था। जी कड़ा किया और गुरु की आज्ञा पालन की। आदर्श शिष्य आदर्श गुरु के चरणों में आदर्श शिक्षा प्राप्त कर रहा था। नित्य प्रति यमुना के जल से गुरु जी को स्नान कराते। कुटी में झाड़ू देते, गुरु की सेवा शुश्रुषा करते। गुरु ने एक दिन डण्ड से ताड़ना की, यतिवर ने गुरु-गौरव का प्रसाद मान स्वीकार की। अन्त में दीक्षान्त का समय आया। निर्धन ब्रह्मचारी गुरुदक्षिणार्थ लोगों की भीख मांग लाया। हां दैव! स्वीकार न हुई। 'क्या भेंट करूँ।' जो तुम्हारे पास हो। 'मेरे पास मेरे अपने सिवा कुछ नहीं।' 'तो अपने आप भेंट करो।' भेंट करी की। गुरु ने अंगीकार की। वही अपने आपकी भेंट मानो आर्य-समाज की स्थापना का प्रथम बीज थी। 'दयानन्द विरजानन्द का हुआ और विरजानन्द के हाथों सारे संसार का।'

पाखण्ड खण्डनी- अब पुष्कर के मेले में दयानन्द पहुंचता है, कुम्भ के महोत्सव सब में दयानन्द गरजता है। वेद से उलटे जाते वैदिकधर्मियों को वेद के पथ पर लाना चाहता है। एक ओर सारी भ्रान्त आर्य जाति है दूसरी ओर अकेला दण्डधारी दयानन्द। 'पाखण्ड खण्डिनी पताका' के नीचे खड़ा कौपीनधारी ब्रह्मचारी आते जाते के लिए अचम्भा था। लोग कहते थे, गंगा के प्रवाह को रोकने का सामर्थ्य इसमें कहाँ? स्वयं भगीरथ आएं तो न रोक सकें।

तपस्या की पराकाष्ठा- ऋषि गरज-गरज कर हार गए। गंगा बहती गई और उसके साथ हिन्दू भ्रान्तियों का प्रवाह भी बहता गया। ऋषि ने डेरा डण्डा उठाया और वनों की राह ली। पूर्ण वीतराग होने का व्रत किया कि कौपीन के अतिरिक्त कोई चीज पास न रखेंगे। महाभाष्य की एक प्रति पास थी, सो भी गुरुवर की सेवा में भेज दी। इसी कौपीन में दयानन्द सोते, इसी में फिरते। नहाकर इसे सूखने को डालते और स्वयं पद्मासन लगाकर बैठे रहते। हिमाच्छन्न नालों में क्या और जलती रेतों पर क्या दयानन्द का यही पहरावा रहा।

शास्त्रार्थ- कोई दो वर्ष दयानन्द ने इसी प्रकार तितिक्षा में

काटे। फिर प्रचार में प्रवृत्त हुए। शास्त्रार्थ पर शास्त्रार्थ करते चले गए। हीरावल्लभ नाम के एक प्रौढ़ पण्डित ने सप्ताह भर संस्कृत में शास्त्रार्थ किया। उनका संकल्प था कि ऋषि से मूर्ति को भोग लगवा कर उठूंगा। ऋषि का पक्ष सुना तो ठाकुर जी को उठाकर गंगा में प्रवाहित किया और मुक्त कण्ठ से माना कि मूर्ति-पूजा शास्त्र विरुद्ध है।

ऋषि के उपदेश में जादू था। कण्ठियां उतरवा दी, मूर्तियां फिंकवा दीं, तिलक छाप की रीति मिटा दी। गायत्री का प्रचार किया। सन्ध्या-लिख लिख बांटी। स्त्रियों को मन्त्र जाप का अधिकार दिया। जाटों, राजपूतों को यज्ञोपवीत पहनाए।

आर्य धर्म की जय- चान्दपुर के शास्त्रार्थ में ऋषि ने आर्य जाति के इतिहास में एक नए युग का बीजारोपण किया। आर्य-आर्य तो आपस में विवाद करते ही थे। मुसलमानों, ईसाइयों से इनकी कभी न ठनी थी। इससे पूर्व प्रथा यह थी कि अहिन्दू हिन्दुओं का खण्डन करे और हिन्दू चुप रहकर सहन करते जाएं। आर्य धर्म आटे का दीया था। कच्चा धागा था, इसने इस भ्रान्ति को मिटा दिया। तीन दिन शास्त्रार्थ होना था। जिसमें मौलवियों और पादरियों के विरुद्ध ऋषि ने आर्य धर्म का पक्ष लेना स्वीकार किया था। एक ही दिन में ऋषि ने आर्य धर्म की स्थापना ऐसी दृढ़ता से की कि दूसरे दिन वहां प्रतिपक्षियों का चिन्हमात्र भी शेष न था। आर्य धर्म की यह विजय धर्म के इतिहास में स्वराक्षरों में लिखने योग्य है।

अन्य मत वालों पर कृपा- ऋषि ने ईसाइयों को निमन्त्रण दिया कि आर्य धर्म को परखो और स्वीकार करो। इस निमन्त्रण में मोहिनी शक्ति थी। सर सैयद ऋषि के चरणों में आते। पादरी स्काट ऋषि के दर्शन करते। पादरी को ऋषि 'भक्त स्काट' कहते। भक्त की अनुपम उपाधि किसी आर्य-समाजी को न मिली, एक ईसाई ऋषि-भक्ति का यह अपूर्व प्रसाद ले गया। मुहम्मद उमर जन्म का मुसलमान था। उसे ऋषि ने अपने हाथों आर्य बनाया और अलखधारी नाम रखा। सारे संसार के लिए आर्य धर्म का द्वार खोलने का श्रेय वर्तमान युग में ऋषि दयानन्द ही को है। कर्नल अल्काट और मैडम ब्लवैटस्की अमेरिका से चलकर ऋषि दयानन्द के चरणों में आए। अपने पत्रों में ऋषि को 'गुरुदेव' कहकर सम्बोधित करते थे।

बन्धन काटने वाला- एक दिन एक ब्राह्मण ने पान का बीड़ा ला दिया। चबाने से प्रतीत हुआ कि इसमें विष है। ऋषि उठे, गंगा पास थी, उस पर जाकर न्योली कर्म किया और विष निकाल दिया। सैयद मुहम्मद तहसीलदार था। उसने दोषी को पकड़वाया और दयानन्द के दरबार में ले गया। ऋषि से यह सहा न गया कि किसी को उनके कारण बन्धन में डाला जाए। क्या दयापूर्ण उत्तर दिया- "मेरा काम तो बन्धन काटना है, बन्धन बढ़ाना नहीं।"

बाल ब्रह्मचारी का बल- ऋषि जिस धर्म का प्रचार करना चाहते थे वह उनके जीवन में मूर्तरूप में विद्यमान था। दयानन्द का सबसे बड़ा बल ब्रह्मचर्य बल था। बाल ब्रह्मचारी को अधिकार था कि व्यभिचारियों को डांटे। विक्रम सिंह ने ब्रह्मचर्य बल का प्रमाण चाहा तो उसकी दो घोड़े की गाड़ी एक हाथ से पकड़कर रोक दी। सांईस बल लगाता है, घोड़े यतन करते हैं, परन्तु गाड़ी हिलने में नहीं आती। पीछे की ओर देखा ऋषिवर गाड़ी रोके खड़े हैं। शरीर से तेज बरसता है। मुख कांति टकटकी लगाकर देखी नहीं जाती।

देवी पूजा- ब्रह्मचारी है और देवियों का आदर करता है। एक नन्ही लड़की बालकों के साथ खेल रही है। ऋषि देखते ही सिर झुका देते हैं। देखने वालों को धोखा है कि सामने खड़े वृक्ष को प्रणाम है, देवता-निन्दक को देवता की परोक्ष शक्ति ने देवता-पूजक बनाया है। ऋषि के मुख से सुनना ही था कि 'वह देखो! वह नन्ही बालिका मूर्त मातृ-शक्ति है।' बस! सभी के मुख से निकला 'धन्य! धन्य!! देवियों के सत्कार-स्वरूप बाल ब्रह्मचारी दयानन्द धन्य!' इस एक घटना में दयानन्द के देवियों के प्रति सम्पूर्ण भावों का मूर्त चित्र चित्रित है। देवियों की शिक्षा हो और शिक्षा के साथ पूजा हो- ये दो सूत्र ऋषि के देवी सम्बन्धी सिद्धान्त का सार है।

अछूत कोई नहीं- दयानन्द की दृष्टि में कोई अछूत न था। उमेदा नाई खाना लाया तो भरी सभा में स्वीकार किया। भक्त की भावना गेंहू के आटे में गुंधी थी, जो भक्त वत्सल की दृष्टि में लाख जन्माभिमानो की अपेक्षा अधिक सम्मान के योग्य थी। कसाई (मजहबी सिख) को किसी ने व्याख्यान सभा से हटाया। कहा- 'नहीं! मेरा व्याख्यान कसाइयों के लिए भी है।'

क्या आप जानते हैं कि सबसे पहला मलकाना रुस्तमसिंह किन शुभ कर-कमलों द्वारा पुनीत यज्ञोपवीत से अलंकृत हुआ था? ऋषि दयानन्द की दया बल-बली भुजाओं ने उसे अस्पृश्यता की गहरी गुहा से उठाया और आर्यत्व के पुण्ड शिखर पर बैठाया।

गोरक्षा- ऋषि का करुणाक्षेत्र मनुष्य जाति तक परमित नहीं था। प्राणिमात्र दयानन्द की दया के पात्र थे। ऋषि ने गोरक्षा के लिए भरसक प्रयत्न किया। एक निवेदन पत्र पर हिन्दू, मुसलमान, ईसाई- सबके हस्ताक्षर कराए कि गो-हत्या राजनियम से बन्द की जाए। ऋषि ने अपने नाम को सार्थक किया, जब दातारपुर के बाहर सड़क पर जाते हुए बैलगाड़ी कीचड़ में धंसी। गाड़ीवान का और बस न चलता था। बैलों पर सोटों की वर्षा करता चला जाता था। बैलों ने बहुतेरी गर्दनें हिलाई, कन्धों पर बहुतेरा दबाव डाला, पर गाड़ी न खींची। गाड़ीवान हारकर रह गया। ऋषि को अधिक दया गाड़ीवान पर आई या बैलों पर- यह कहना कठिन है। दोनों के हृदय कृतज्ञता भार से आभारी थे, जब राजों-महाराजों के गुरु लोकमान्य दयानन्द ने स्वयं कीचड़ में उतर बैलों का जुआ अपनी गर्दन पर डाला और जो भार दो बैलों से न खींचा गया था, अकेले अपने भुजाबल के जौहर से बाहर कर दिया।

ऋषि की लीला बाहुबली लीला है। जिस पक्ष पर दृष्टि डालो वही कहता है, मैं सबसे मीठा हूं। वस्तुतः गुड़ जहां से खाओ मीठा लगता है। इस लीला के अवसान में भी वह महत्त्व है जो और मनुष्यों के जीवन में नहीं।

प्रचार की धुन- ऋषि दयानन्द ने अन्तिम यात्रा जोधपुर की ओर की! इस समय तक ऋषि ने बीसियों आर्यसमाजों की स्थापना कर ली थी। पंजाब, पश्चिमोत्तर (वर्तमान संयुक्त प्रान्त), राजपूताना- ये सब प्रदेश चरणों में सिर झुका चुके थे। कितने राजपूत नरेश शिष्य बन चुके थे। जोधपुर में भी महाराज ने बुलाया था। चरण-सेवकों ने

क्रमशः.....७ पर

ऋषि दयानन्द न आये होते तो हम दीपावली न मनाते होते

-मनमोहन कुमार आर्य

देश भर में व विदेश में भी जहां भारतीय आर्य हिन्दू रहते हैं, वहां कार्तिक मास की अमावस्या के दिन दीपवली का पर्व मनाया जाता है। अमावस्या के दिन रात्रि में अन्धकार रहता है जिसे दीपमालाओं के प्रकाश से दूर करने का सन्देश दिया जाता है। इस दिन ऐसा क्यों किया जाता है, इसका अवश्य कोई कारण होगा। प्राचीन काल में भारत का हर उत्सव व पर्व यज्ञ वा अग्निहोत्र करके मनाया जाता था। बाद में यज्ञ में पशु हिंसा होने लगी। इसके विरोध में बौद्ध मत व जैन मत का आविर्भाव हुआ जो पूर्ण अहिंसा पर आधारित मत थे। यज्ञों में होने वाली हिंसा के कारण वैदिक काल में किये जाने वाले अहिंसात्मक यज्ञ भी समाप्त हो गये। इनसे वायुमण्डल व वर्षा जल की शुद्धि और स्वास्थ्य आदि को होने वाले लाभों सहित जो आध्यात्मिक लाभ होते थे, वह भी बन्द हो गये। अब पूजा दीप जलाकर की जाने लगी। अनुमान है यह यज्ञ का ही एक विकृत रूप था। यज्ञ में घृत की आहुति से घृत को जलाया जाता है। इसके जलने से वायु के अनेक दोष व दुर्गुन्धादि कुछ मात्रा में दूर होते हैं। वायु में विद्यमान हानिकारक किटाणुओं पर भी इसका प्रभाव पड़ता है और उनकी संख्या में कमी आती है। दीप की ज्योति की उपमा अनेक स्थानो ंपर जीवात्मा से भी दी जाती है। किसी घर में किसी की मृत्यु हो जाती है तो उस परिवार में वहां कुछ दिनों तक दिवंगत व्यक्ति के शयन कक्ष में एक दीपक जलाकर रखा जाता है। यह एक प्रकार से आत्मा का प्रतीक माना जाता है। वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन करने पर इसका कोई लाभप्रद उद्देश्य प्रतीत नहीं होता अपितु यह एक अन्धविश्वास व मिथ्या परम्परा ही प्रतीत होती है। ऋषि दयानन्द जी ने भी इस विषय में कुछ नहीं लिखा परन्तु स्पष्ट किया है कि मृत्यु होने पर अन्त्येष्टि कर्म करने के बाद मृतक व्यक्ति के लिये कोई कर्म करना शेष नहीं है। हां, घर की शुद्धि जल से व दीवारों पर चूने तथा गोबर के लेपन आदि से की जा सकती है। इससे हानिकारक किटाणुओं का नाश होता है। जहां जितनी अधिक स्वच्छता होती हैं, वहां हानिकारक किटाणु उतने ही कम होते हैं। घर व घर के बाहर के वायुमण्डल में विद्यमान हानिकारक सूक्ष्म किटाणुओं को नष्ट करने का प्रभावशाली उपाय अग्निहोत्र यज्ञ ही है। पं. लेखराम जी ने भी एक बार एक ऐसे घर में यज्ञ कराया था जहां सर्पो का वास था और जहां रात्रि में सर्प निकला करते थे। पं. लेखराम जी ने वहां जाकर शुद्ध गोघृत से यज्ञ कराकर उस कमरे को पूर्णतया बन्द कर दिया था जिससे रात्रि के बाद जब उसे खोला गया तो वहां सभी सर्प बेहोश पड़े हुए थे। इससे अनुमान लगता है कि यज्ञ का विषैले जीव-जन्तुओं पर प्रभाव पड़ता है। जिस प्रकार कार्बन-डाइ- आक्साइड गैस से हमें हानि होती है उसी प्रकार से यज्ञ की गन्ध व वायु से मनुष्यों पर अनुकूल तथा विषैले जीव-जन्तुओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

दीपावली पर विचार करते हैं तो ज्ञात होता है कि यह शरद ऋतु के आगमन पर मनाया जाने वाला पर्व है। इससे पूर्व हम गर्मी व वर्षा ऋतु का सुख ले रहे थे। अब शरद ऋतु आरम्भ होने पर हमें अपने स्वास्थ्य की रक्षा करनी है। शरद ऋतु भी पर्वतों व पर्वतीय प्रदेशों में अधिक तथा मैदानी क्षेत्रों में न्यून व दक्षिण भारत के कुछ स्थानों पर बिलकुल नहीं होती। शीत ऋतु में वहां का तापक्रम कुछ कम अवश्य रहता है परन्तु वहां जनवरी के महीने में जब उत्तर भारत के कुछ व अनेक पर्वतों पर हिमपात होता है और लोगों के शरीरों मे ठिठुरन होती है, ऐसे में वहां किसी गर्म व ऊनी वस्त्र की आवश्यकता नहीं होती। अतः उत्तर भारत के लोगों को शीत ऋतु के कुप्रभावों से स्वयं को बचाने के लिये सावधान होना होता है। भोजन में ऐसे पदार्थों का सेवन करना होता है जिससे कि शीत से होने वाले रोग न हो। दीपावली के दिन प्राचीन काल में नवान्न से वृहद यज्ञों का विधान था। जिसका बिगड़ा रूप ही दीप जलाने को देखकर प्रतीत होता है। हम समझते हैं कि वृहद यज्ञ व ईश्वरोपासना करके, नये वस्त्र पहनकर, मिष्ठान्न व पकवान बनाकर व अपने प्रियजनों व निर्धन बन्धुओं में उसका वितरण करके तथा रात्रि में सरसों के तेल व घृत के दीपक जलाकर यदि दीपावली मनायें तो यह दीपावली मनाने का उचित तरीका है। इसके विपरीत पटाखों में धन का अपव्यय करके, वायु प्रदुषण करके तथा

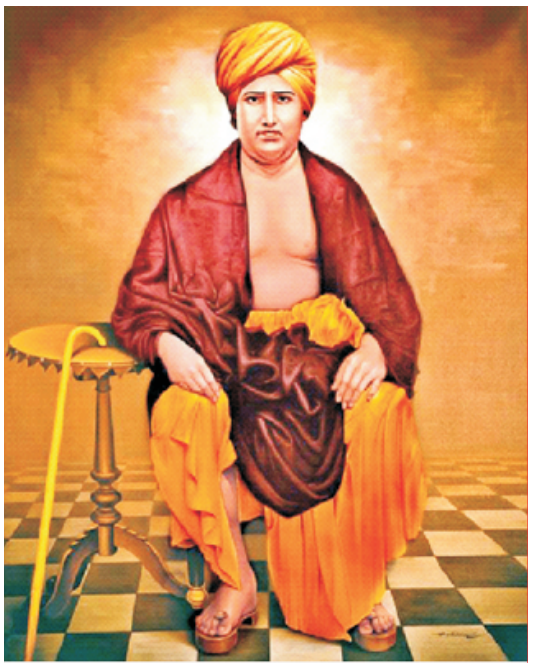

अनावश्यक हुड़दंग करके पर्व को मनाना कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। इससे तो हमारी मानसिक अवस्था व सोच का पता चलता है। हमारी सोच स्वयं को स्वस्थ व प्रसन्न रखने वाली, अपने स्वजनों का कल्याण करने वाली तथा देश व समाज को आर्थिक व सामाजिक रूप से सशक्त करने वाली होने वाली चाहिये। महर्षि दयानन्द जी के जीवन पर दृष्टि डाले तो वह यही सन्देश देते हुए प्रतीत होते हैं कि जीवन में कोई भी ऐसा कार्य न करें जिसका वेदों में विधान न हो और जिसके करने से हमें व समाज को कोई लाभ न होता हो। प्रदुषण उत्पन्न करने वाले किसी कार्य को किसी भी मनुष्य को कदापि नहीं करना चाहिये। यह कार्य यज्ञीय भावना के विरुद्ध होने से निषिद्ध व त्याज्य है। हमें अबलों व निर्धनों के जीवन को भी सुखमय बनाने के लिये कुछ दान अवश्य करना चाहिये। उनको भी अच्छा भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा व चिकित्सा सहित सुखमय जीवन व्यतीत करने का अधिकार है। यदि समाज में किसी व्यक्ति को शोषण, अन्याय, अपराध, पक्षपात, उपेक्षा, छुआछूत, अभाव व अज्ञान का सामना करना पड़े तो वह देश व समाज अच्छा या प्रशंसा के योग्य नहीं होता। वेद और महर्षि दयानन्द के जीवन से हमें यही शिक्षा प्राप्त होती है।

ऋषि दयानन्द ने अपने विद्या गुरु प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी से सन् १८६३ में दीक्षा लेकर उनकी ही प्रेरणा से देश व समाज से अविद्या, अज्ञान, अन्धविश्वास, कुरीतियां, मिथ्या परम्पराओं को हटाने के लिये वेदों व उनकी मान्यताओं तथा सिद्धान्तों का प्रचार आरम्भ किया था। वह समाज को अज्ञान से मुक्त कर उसे ज्ञान व विद्या से पूर्णतः सम्पन्न व समृद्ध करना चाहते थे। मत-मतान्तरों का आधार भी अविद्या ही है। धर्म केवल वेद व उसकी सत्य मान्यताओं का ज्ञान व आचरण को कहते हैं। मत-मतान्तरों की अविद्या के कारण ही संसार में मनुष्य दुःखी व पीड़ित हैं। ऋषि दयानन्द के समय व उससे पूर्व मुसलमान व ईसाई हिन्दुओं का छल, भय, लोभ व ऐसे अनेक प्रकार के उपायों से अज्ञानी, ज्ञानी, निर्धन, पीड़ित लोगों का धर्मान्तरण करते थे। औरंगजेब के उदाहरण से ज्ञात होता है कि वह प्रतिदिन हिन्दुओं को भयाक्रान्त कर सहस्रों हिन्दुओं का धर्मान्तरण करता था। ऋषि दयानन्द के समय में हिन्दुओं की संख्या कम हो रही थी व दूसरे मतों की संख्या बढ़ रही थी। हिन्दुओं की कुछ मान्यतायें व कुरीतियां भी हिन्दुओं को अपने पूर्वजों के धर्म का त्याग करने के लिये बाध्य करती थीं। यदि दयानन्द न आते तो यह क्रम चलता रहता और आज हिन्दुओं की जो संख्या है वह इससे कहीं अधिक कम होती। ऋषि ने देश को आजाद कराने के जो विचार दिये थे, वह भी न मिलते। पता नहीं स्वदेशी व स्वतन्त्रता का आन्दोलन भी चलता या न चलता। ऐसी स्थिति में हिन्दुओं की स्थिति अत्यधिक चिन्ताजनक होती। जैसे पाकिस्तान आदि मुस्लिम देशों में हिन्दुओं को अपने धर्म पालन में स्वतन्त्रता नहीं है, वहां हिन्दू मन्दिरों का निर्माण नहीं कर सकते, वैसी ही स्थिति भारत में भी उत्पन्न हो जाती। ऐसी स्थिति कुछ विदेशी व विधर्मी शासकों के समय में रही भी है। भारत की मुस्लिम रियासत हैदराबाद आदि में तो हिन्दुओं की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। ऋषि दयानन्द ने इन सब बातों को जाना व समझा था। आर्य हिन्दुओं को इन आपदाओं व संकटों से बचाने के लिये उन्हें वेद-ज्ञान का प्रचार उचित प्रतीत हुआ था जिससे निःसन्देह सनातन वैदिक आर्य धर्म की रक्षा हुई है। हमें लगता है कि वर्तमान समय में ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के प्रभाव से ही हम आर्य हिन्दू देश में अपनी धर्म व संस्कृति को बचाये हुए हैं। यदि ऋषि दयानन्द न आये होते और उन्होंने जो कार्य किया है, वह न किया होता तो हम आर्य हिन्दू सुरक्षित रह पाते, इसमें सन्देह होता है। भारत के सभी विधर्मी आर्य-हिन्दू पूर्वजों की ही सन्तानें हैं। पाकिस्तान व बंगला देश आदि में जो मुस्लिम बन्धु हैं उनके पूर्वज भी आर्य हिन्दू ही थे। इस तथ्य की उपेक्षा होती देखते हैं और जिस सुधार की अपेक्षा है, वह नहीं हो रहा है। ऋषि दयानन्द जी के आने के बाद धर्मान्तरण पर जो कमी आई थी उसका कारण ऋषि दयानन्द का वेदों का प्रचार, आर्यसमाज का संगठन व उसके समाज सुधार आदि कार्य रहें हैं। इसी से आर्य हिन्दुओं की रक्षा हुई है।

कुछ लोग मानते हैं कि दीपावली के दिन राम रावण का वध करके अयोध्या लौटे थे। अयोध्यावासियों ने उनकी विजय व आगमन के उपलक्ष्य में अयोध्या में दीप जलाये थे। यह बात इतिहास के प्रमाणों से सिद्ध नहीं होती तथापि यदि हम इस दिन रामचन्द्र जी की विजय को स्मरण करते हैं तो इसमें कोई बुराई नहीं है। हमें यह याद रखना चाहिये कि राम चन्द्र जी ने रावण को पराजित किया था परन्तु दीवाली की तिथि व उससे कुछ समय पूर्व नहीं। हमारा कर्तव्य है कि हम इतिहास की रक्षा करें। दीपावली वैदिक वर्णव्यवस्था के अनुसार वैश्य वर्ण का पर्व भी माना जाता है। आज सभी त्यौहार सभी लोग मिलकर मनाते हैं। यह एक अच्छी बात है।

आज हम, सारा आर्य-हिन्दू समाज व विश्व के सभी लोग ऋषि दयानन्द जी द्वारा विश्व को वेदों का ज्ञान देने के लिये ऋणी हैं। हम ऋषि दयानन्द जी को उनके बलिदान दिवस को कोटि-कोटि नमन करते हैं। हमारा सौभाग्य है कि हम ईश्वरीय ज्ञान वेदों से युक्त हैं। यही ज्ञान व इसके अनुरूप कर्म मनुष्य को जन्म-जन्मान्तर में लौकिक व पारलौकिक सुख प्राप्त कराते है। हमें अपनी सामर्थ्य के अनुसार वेदों का प्रचार अवश्य करना चाहिये। इसमें हमारा व अन्यों का कल्याण है। इसी से हमारी धर्म व संस्कृति सुरक्षित रह सकती है।

महर्षि दयानन्द क्या थे?

(स्वामी दयानन्द के बलिदान दिवस के अवसर पर प्रकाशित)

-डॉ० विवेक आर्य

वह मूलशंकर था, चैतन्य था, महाचैतन्य था, दयानन्द था। सरस्वती था, वेदरूपी सरस्वती को वह इस धरातल पर प्रवाहित कर गया। वह स्वामी था, वह सन्यासी था, परिव्राट था। दंडी था, योगी था, योगिराज था, महा तपस्वी था। योग सिद्धियों से संपन्न था-परन्तु उनसे अलिप्त था। मनीषी था, ऋषि था, महर्षि था, चतुर्वेद का ज्ञाता तथा मन्त्रद्रष्टा था। ब्रह्मचारी था, ब्रह्मवेत्ता था, ब्रह्मनिष्ठ था, ब्रहमानंदी था। अग्नि था, परम तपस्वी था, वर्चस्वी था, ब्रह्म वर्चस्वी था। इस धरातल पर शंकर होकर आया था। शंकर के मूल खोज कर गया और दयानन्द बनकर अपनी दया संसार पर कर गया। नश्वर देह के मोह को त्याग कर हंसते हंसते प्रसन्नता से, परम प्रभु के प्रेम में मस्त होकर ब्रह्मानंद में विलीन हो गया। एक अपूर्व जीवन, एक अद्भुत क्रांति, अतीत के गुण गौरव का एक मधुर लक्ष्य, एक महान आशा का संचार, एक अद्भुत जीवन-ज्योति इस जगत में अनंत समय के लिए छोड़ गया।

वह शंकर था- निस्संदेह शंकर ही था। प्राणिमात्र के कल्याण के लिए, विश्व के कल्याण के लिए उसकी अमर साधना थी। उसके जीवन का एक एक क्षण उसकी पूर्ति में लगा। हम जिस धरातल पर हैं, वह उससे बहुत ऊंचाई पर था। शुद्ध चैतन्य था। उसने हमारे अंदर चेतना का संचार किया। हमारे इस विश्व की जातियों में, हमारे देशों में, हमारे धर्म-कर्मों में, निस्तेजता, प्राणहीनता और मलिनता गहरी जड़े जमा चुकी थी। उस शुद्धबुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी ने अपने ब्रहा वर्चस तेज से हम सबके जीवन एवं धर्म-कर्म को चैतन्य, तेजोमय एवं ब्रह्मा से वेद से संयुक्त कर दिया। उस चैतन्य ब्रह्मचारी से चेतना एवं प्राण प्राप्त कर आज हम जीवित हैं, गौरवशाली हैं। हम सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक निस्तेजता को त्याग कर जीवन एवं चेतना का अनुभव कर रहे हैं और दूसरों को भी अब हमारी तेजस्विता का भान होने लगा है। आज विश्व की आंखें हमारी ओर किसी आशा से, किसी महान सन्देश को प्राप्त करने के लिए लगी हुई हैं।

वह सरस्वती था। वेद विद्या का अपार और अथाह समुद्र था। काशी की पंडित मण्डली ने उसकी थाह लेनी चाही परन्तु वे सब उसकी गहराई को न पहुंच सके। मत-मतान्तरों के विद्वानों ने भी अनेक बार उनके अगाध ज्ञान की थाह लेनी चाही। उनके ज्ञान सागर में गोते लगाये, परन्तु वे स्वयं अपने प्राण बचाकर भाग खड़े हुये। वह खारा समुद्र नहीं था, अपितु अत्यंत रसवान समुद्र था। उसके पास जो जाता तृप्त होकर ही आता था।

वह स्वामी था। विश्वनाथ मंदिर का वैभव काशी नरेश ने अर्पण करने की प्रार्थना की, उदयपुर महाराणा ने भी एकलिंग की गद्दी उनके चरणों में अर्पित की परन्तु वह लोभ लालच से विचलित होने वाला नहीं था। ब्रिटिश शासन काल में, पराधीन भारत में, स्वराज्य की सर्वप्रथम भावना का उसने निर्भया होकर सूत्रपात किया। वह भय से विकम्पित होने वाला नहीं था। मृत्यु से भी विचलित होने वाला नहीं था। मृत्युंजयी था। आत्मसंयमी था। केवल अपना ही स्वामी नहीं था-अपनी वृतियों का ही स्वामी नहीं था, अपितु संसार का स्वामी था। संसार का स्वामी होने पर ही एक लंगोटधारी, सर्वहुत, सर्वस्व त्यागी, सन्यासी था। राजा, महाराजा और सम्राटों की कृपा की उसे इच्छा नहीं थी। राजा-महाराजा और सम्राटों का भी सम्राट, परिव्राट था। जिनकी चारों दिशायें ही रक्षक थीं और परम प्रभु ही उसका मंत्रदाता था।

वह योगी था। उन्होंने तपस्या से अपने शरीर,मन और अंतःकरण को पवित्र किया था। पवित्र अंतः करण में वह नित्य ब्रह्मा का दर्शन किया करता था। ब्रह्मा से नित्य योग-मेल मिलाप किया करता था। ब्रह्म के आनंद में नित्य निमग्न रहता था। अतएव निर्भय था, निर्भ्रम था, निःशंक था। उनके चारों और आनंद का ही साम्राज्य था। आनंद का ही सागर हिलौरें मार रहा था। ब्रह्मा का तेज-ब्रह्मा वर्चस उसके मुख मंडल पर देदीप्यमान था। ज्ञान और तेज की रश्मियां उससे प्रस्फुटित होती रहती थीं। वह कभी न थकने वाला और विश्राम न करने वाला था। वह सदा जाग्रत जागरूक था और सबको जगाने वाला था। सबको ज्ञान ज्योति से उसने प्रबुद्ध किया।

योगसाधना में रत रहकर अपना ही उद्धार करने वाला वह नहीं था। वह योगिराज था। भोगों की लालसाओं के पर्वत उससे टकराकर चकनाचूर हो जाते थे। अज्ञान, अविद्या के भयंकर प्रलयंकारी तूफान , वहां शांत हो जाते थे। लोभ एवं लालच की कीचड़ वहां जाकर शुष्क बालू बन जाती थी और उस परम तेजस्वी को अपने पंक में निमग्न न कर सकती थी। वह त्याग में अनुपम था, तपस्या में अनुपम था, ज्ञान में अनुपम था। अनुपम वक्त था, उसकी वकृतत्व शक्ति सभी को मोह लेती थी। उसकी अद्वितीय तर्कना शक्ति युगों से पड़े हुए रूढ़िग्रस्त विचारों को पल मात्र में छिन्न-भिन्न कर देती थी। जो कार्य कोई अन्य न कर सका। वह कार्य महर्षि दयानन्द ने विश्वकल्याण के लिए कर दिया। इसलिए हम उनके कृतज्ञ हैं, उनके आगे नतमस्तक हैं। उनकी मधुर स्मृति पुनः सजीव बनाने का प्रयास करते रहते हैं।

महर्षि का जन्मदिवस आया है। देश की जनता उसे बड़े हर्ष और उल्लास से बनाती हैं। मैंने सभी को प्रसन्नचित देखकर पूछा - महर्षि दयानन्द क्या थे? उन्होंने तुमुल घोष में कहा-

"वह महर्षि महान् था! महान्तर था!! महानतम था !!"

पृष्ठ.....५ का शेष

विनय की, "वहां के लोग क्रूर स्वभाव के पुरूष हैं, आपकी शिक्षा का गौरव नहीं समझेंगे। सम्भव है, प्राणो के बैरी हो जाएं।" दयावीर दयानन्द ने उत्तर दिया- "तभी तो जा रहा हूँ। बिगड़ों के सुधार की और अधिक आवश्यकता है। रही मेरे प्राण-घात की बात, सो तो यदि मेरी एक-एक उंगली से बत्ती का काम लिया जाए, और इसी से किसी को सीधा रास्ता सूझ जाए तो मेरे जीवन का प्रयोजन इसी बात में सिद्ध हो गया।" कहने की आवश्यकता नहीं कि ऋषि के पहुंचते ही राजा चरणों का भक्त हो गया, प्रजा अनुरागरक्त हो गई। प्रतिदिन आनन्द वर्षा होने लगी।

निर्भयता- एक दिन राजा ने महराज को अपने डेरे पर निमन्त्रित किया। ऋषि बिना सूचना दिए जा पहुंचे। राजा के दरबार में उसकी प्यारी वेश्या नन्हीं जान आई हुई थी। राजा खिसियाने हुए। उसे पालकी में बैठाकर उठवा तो दिया परन्तु ऋषि से आंखें चार न हो सकीं। ऋषि यह कुत्सित दृश्य देखकर लाल हो गए। गरजकर कहा- "सिंह की गोद में कुतियों का क्या काम?"

दया आदर्श- यह निर्भयता ऋषि के लिए विष सिद्ध हुई। विरोधियों ने दल बना लिया। कुछ दिनों में ही जगन्नाथ रसोइए को घूस देकर वीतराग योगी-राज को विष दिलवा दिया। ऋषि ने उस समय भी अपनी स्वाभाविक दया से काम लिया। जगन्नाथ ने स्वयं माना, 'ऋषिवर! यह अपराध मुझसे हुआ है।' ऋषि ने उसे धन दिया और आग्रहपूर्वक कहा शीघ्र आंगल राज्य से बाहर हो जाओ। जिससे तुम्हारे प्राणों पर संकट न आए।

विष का प्रभाव धीरे-धीरे हुआ। दस्त आने लगे, पेट का शूल बढ़ता गया। बार-बार मूर्छा होने लगी। महीना भर यह क्लेश रहा। वैद्य चकित थे कि इस वेदना में ऋषि सन्तोषपूर्वक जी रहे हैं। यह ऋषि का चमत्कार था।

देहावसान- जोधपुर से आबू और आबू से अजमेर गए। दीवाली की सायंकाल को, जहां घर-बार गली-बाजार में दीपक जलाए गए, यह जाति-कुलदीप, संसार-समुद्र का ज्योति-स्तम्भ देखते-देखते जगमगाती चकाचोंध से चुंधियाती रात्रि में अन्तर्हित हो गया। देखने वालों ने देखा कि बुझते दीपक ने सम्भाल लिया। मृत्यु समय समीप आया देखकर ऋषि सचेत हुए। क्षीर कराया, शरीर पौंछवाया, चनों का रस लिया, प्रभु का भजन, मन्त्रों का पाठ करते रहे। अन्त में "परमेश्वर! तैने अच्छी लीला की, तेरी इच्छा पूर्ण हो।" यह शब्द कहे और अत्यन्त आह्लादपूर्वक प्राण त्याग दिए।

देह छोड़ते समय दयानन्द के मुख पर एक विचित्र क्रान्ति थी। पूर्ण किए कर्तृतव्यों का सन्तोष छाती को उभारे हुए था। जगज्जनक कि गोदी में परम पिता का प्यारा पुत्र लालायित हृदय साथ लिए लौट रहा था। पिता की आज्ञा का पालन किया है, यह आह्लाद था, शान्ति थी, सन्तोष था।

दृष्टि रसायन- जीवन प्रचार के अर्पण हुआ था, मरण भी प्रचार का साधन हुआ। गुरुदत्त एम.ए. पंजाब यूनिवर्सिटी में प्रथम रहे थे, उनकी यह ऋषि से प्रथम भेंट थी। बातचीत नहीं हुई, शंका-समाधान नहीं हुआ, प्रश्नोत्तर का अवसर नहीं मिला, परन्तु चंचल, शंका का अवतार, तर्क-मूर्ति, गुरुदत्त ऋषि पर आसक्त है। उसे कोई सन्देह नहीं रहा, क्षण मात्र में उसकी काया पलट हो गई है एक दृष्टि ने कुछ का कुछ कर दिया।

ऋषि की दृष्टि रसायन है। आओ, उस दृष्टि के दर्शन करो। खोटा सिक्का है? लाओ, खरा सोना हो जाएगा। ऋषि के जीवन के अध्ययन से शिक्षा लाभ करो। उनके ग्रन्थों को पढ़ो और उनके जीवन का मिलान उनके लेखों से करो। भर्तृहरि ने कहा है:

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।

यह वाक्य ऋषि दयानन्द के महत्त्व का सार है।

अमर दयानन्द- आज केवल भारत ही नहीं, सारे धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक संसार पर दयानन्द का सिक्का है। मतों के प्रचारकों ने अपने मन्तव्य बदल लिए हैं, धर्म पुस्तकों के अर्थों का संशोधन किया है। महापुरुषों की जीवनियों में परिवर्तन किया है। ऋषि का जीवन इन जीवनियों में बोलता है, ऋषि मरा नहीं करते, अपने भावों के रूप में जीते हैं। दलितोद्धार का प्राण कौन है? पतित पावन दयानन्द। समाज सुधार की जान कौन है? आदर्श सुधारक दयानन्द। शिक्षा प्रचार की प्रेरणा कहां से आती है? गुरुवर दयानन्द के आचरण से। वेद का जय-जयकार कौन पुकारता है? महर्षि दयानन्द। देवी सत्कार का मार्ग कौन दिखाता है? देवीपूजक दयानन्द। ब्रह्मचर्य का आदर्श कौन है? बाल-ब्रह्मचारी दयानन्द। गोरक्षा के मिष से प्राणिमात्र पर करुणा दिखाने का बीड़ा कौन उठाता है? करुणानिधि दयानन्द। आओ, हम अपने आपको ऋषि के रंग में रंगें। हमारा विचार ऋषि का विचार हो, हमारा आचार ऋषि का आचार हो, हमारा प्रचार ऋषि का प्रचार हो। हमारी प्रत्येक चेष्टा ऋषि की चेष्टा हो। नाड़ी-नाड़ी से ध्वनि उठेः- ऋषि दयानन्द की जय!

(स्त्रोत- आर्य मर्यादा : आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र का मार्च २०२० का अंक)

प्रस्तुति-प्रियांशु सेठ

आर्य समाज कैण्टोमेन्ट, सदर का वार्षिकोत्सव

आर्य समाज कैण्टोमेन्ट सदर, लखनऊ का वार्षिकोत्सव दिनांक २१ नवम्बर से २४ नवम्बर, २०२४ तक बड़े हर्षोल्लास एवं धूमधाम से मनाया जायेगा।

समारोह में डॉ. आयुषि राणा (प्रसिद्ध वैदिक विदुषी), आचार्य अमृता आर्या, भजनोपदेशिका एवं आचार्य संतोष वेदालंकार आदि वैदिक विद्वान पधार रहे हैं।

कार्यक्रम में प्रातः देवयज्ञ, भजन व प्रवचन, मध्यान्ह विविध सम्मेलन, सायं भजन व प्रवचन आदि होंगे।

सभी धर्म जिज्ञासु नर-नारियों से निवेदन है कि वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए समाज के जन जागरण के लिए वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को सुनकर ज्ञान प्राप्त करें व समारोह को सफल बनावें।

पंजी०सं० आर.एन.आई.-२२४१/५७ -आर्यमित्र आर्यमित्र आर्यमित्र ०७ नवम्बर, २०२४ पोस्टल रजि.जी.पी.ओ. लखनऊ/एन.पी.-१४/२०१६-२१ एक प्रति ₹ ५.००

आर्य मित्र

नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०९४१२६७८५७१, मंत्री-०९४१५३६५५७६, सम्पादक-९४५१८८१९७७
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,

.....

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक–पंकज जायसवाल भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस,
5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है–सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।